International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol.9 No.5 May – June 2022

भक्ति आन्दोलन में संत कबीर का योगदान एवं सामाजिक गतिशीलता

संजय कुमार
विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची
***Corresponding Author-* संजय कुमार**
Email- sanjaykumar012345@gmail.com

सारांश

भक्ति आन्दोलन का दूसरा चरण १३वीं से १६वीं शताब्दी का समय था। इसका विकास राजनीतिक, आर्थिक और एक सामाजिक परिवर्त्तन के बीच धर्म एक प्रमुख स्थायी प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है। भक्ति आंदोलन ने प्राचीन धर्म के पुनः स्थापना का सफल प्रयास किया था। भक्ति आंदोलन के मध्यकालीन भारत में प्रमुख संतों में कबीर, गुरुनानक, चैतन्य महाप्रभु, वल्लभाचार्य आदि के सिद्धांतों एवं योगदान से सामाजिक और धार्मिक अवधारणाओं में भी परिवर्त्तन हुआ था और सामाजिक गतिशीलता को बल मिला, जिसके फलस्वरूप मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्त्तन की भूमिका निर्मित हो सकी थी। जनसाधारण के जीवन की परिस्थितियों में परिवर्त्तन लाने एवं व्यैक्तिक मुक्ति और भगवान से रहस्यात्मक मिलन का कार्य किया था। हिंदू समाज की दयनीय दशा, तत्कालीन हिंदू समाज में प्रचलित कुरीतियाँ, हिंदू और सहिष्णुता, अपरिवर्त्तनशील तथा अनुदत्ता को नष्ट करने का सफल प्रयास भक्ति आंदोलन के संतो के द्वारा किया गया था। भक्ति आंदोलन ने ना केवल कर्मकांड और जाति भेद का जमकर विरोध किया बल्कि हिंदू समाज में धर्म परिवर्त्तन पर भी रोक लगाया। सामाजिक और सांस्कृतिक लोकाचार के रूप में समन्वय कई मायनो में हिंदू और मुसलमानों के बीच जनवादी धार्मिक आंदोलन के रूप में जाना जाता है। आंदोलन में हिंदू और मुसलमानों में संबंध का कार्य किया अर्थात् दोनों धर्मों में समन्वय का कार्य ही नहीं बल्कि मनुष्य की समानता का भी प्रतिपादन किया था। इस प्रकार मध्यकालीन भारत में भक्ति आंदोलन कई दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण आंदोलन रहा था।
मध्यकालीन भारत में भक्ति आन्दोलन सर्वाधिक व्यापक और बहुआयामी आन्दोलन था। समाज, राजनीति तथा संस्कृति पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ा था। भक्ति आन्दोलन कि उत्पति तथा विकास दक्षिण भारत और उत्तर भारत में विशेष परिस्थितियो में हुआ था। भक्ति आन्दोलन का विकास दो चरणो में हुआ था। प्रथम चरण भागवत गीता से लेकर १३वीं शताब्दी तक का समय था जब इस्लाम ने देश के अंदरूनी हिस्सो में प्रवेश किया था। दूसरा चरण १३वीं से १६वीं शताब्दी का समय था। पहले विकास में भक्ति केवल एक व्यक्तिगत भावना थी। वासुदेव का धर्म उन लोगों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति था जिन्होंने उपनिषदों की बौद्धिक और सत्ता प्रणाली में आध्यात्मिक और नैतिक संतुष्टि नहीं पाई थी।[१] भक्ति आन्दोलन को प्राचीन काल में देख जा सकता है। ऋग्वेदों में देवों की स्तुतियों का वर्णन है। उपनिषद काल में चिंतन की प्रधानता है। भगवत धर्म की तभी स्थापना हुई है। गीता में ज्ञान भक्ति तथा कर्म के तीन मार्ग हैं। भक्ति के कारण ही कनिष्क के काल में धर्म दो भागों में विभक्त हुआ था। गुप्त काल मे भक्ति की धारा चलती रही।[२] अतः इसकी उत्पति भारत के प्राचीन परम्पराओं के आधार पर थी। भक्ति आन्दोलन का द्वितीयक चरण १३वीं शताब्दी से १६वीं शताब्दी के काल में इसका विकास राजनीतिक, आर्थिक और एक सामाजिक परिवर्त्तन के बीच धर्म एक प्रमुख स्थायी प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है।

इस प्रकार के परिदृश्य में धार्मिक समुदायों को अपना सामाजिक आधार बनाने में महत्त्वपूर्ण अवसर प्रदान किए। इस काल में भक्ति आन्दोलन ने उत्तर भारत में इस्लाम के चुनौतियों को स्वीकार और प्रभावित किये थे। इस्लाम तथा हिन्दू धर्म के पारस्परिक सम्बन्धों के फलस्वरूप नवीन विचारों का उदय हुआ था। ऐतिहासिक तथा सामाजिक समस्याओं पर लोगों ने गम्भीर रूप से विचार करना प्रारम्भ किया था। समाज पर ब्राहमणों के प्रभुत्त्व के विषय में अनेक प्रश्नों को उठाया गया। जाति-प्रथा को गम्भीरता से लिया गया।[३] भक्ति आन्दोलन ने हिन्दुओं के सामाजिक तथा धार्मिक जीवन में पुनः आस्था तथा विश्वास जगाया।

मुसलमानों के भारत में आने से पूर्व बौद्ध धर्म, जैन धर्म और वैदिक धर्म का प्रचलन था और हर व्यक्ति को धार्मिक स्वतंत्रता थी। भारत में मुस्लिम सत्ता के स्थापना से नई समस्या खड़ी हो गई थी। मुसलमानों अपने साथ इस्लाम धर्म लाए थे जो बिलकुल मेल से परे था।[४] मध्यकालीन इतिहासकार आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव लिखते हैं कि "सल्तनतकालीन मुस्लिम शासन का स्वरूप धर्म से प्रभावित था।"[५] जदुनाथ सरकार लिखते है कि इस्लाम धर्मशास्त्र सच्चे अस्तित्त्व को बताता है। उसका सर्वोच्च कर्त्तव्य ईश्वर के मार्ग में जिहाद करना है तथा काफिरों के देश में तब तक जिहाद करना है जब तक कि वे इस्लामी राज्य में न बदल जाए।[६] ईश्वरी

प्रसाद, लिखते है कि भारत में मुस्लिम राज्य धर्मातरित था, बादशाह सीजर भी पोप थे किन्तु धार्मिक संबंध में उनका उपाधिकार कुरान और शरियत के नियमों से निमित था।[७]

इन लेखकों के विचारों से कहा जा सकता है कि दिल्ली सल्तनत एक साम्प्रदायिक तथा इस्लामिक राज्य था। हिन्दुओं की दयनीय स्थिति मुस्लिम शासन के कृपा पर थी।[८] इस्लाम का समकालीन समाज पर काफी प्रभाव था और यह प्रभाव प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में पड़ा था। इस्लाम उनके लिए समानता व एकता का संदेश लेकर आया था। धर्म और समाज में सभी बराबर था। सूफि संतो के समतावादी सिद्धांतों से प्रभावित होकर हिन्दू समाज के निम्न वर्ग के लोगों ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर भारतीय मुसलमान के रूप में नए जीवन का प्रारम्भ किया था। भारतीय मुसलमानों की उन्नति देखकर अन्य को प्रेरणा मिली और उन्होनें भी इस्लाम को स्वीकार करना श्रेयष्कर समझा था। धर्म परिवर्त्तन के इस नवीन प्रक्रिया ने भक्ति आंदोलन को चुनौती दी। किन्तु शीघ्र ही भक्ति आन्दोलन ने धर्म परिवर्त्तन की इस प्रक्रिया पर रोक लगाया था।[९] इस्लाम के प्रभाव से हिन्दू जाति में धर्मोपदेश का एक समुदाय सामने आया। इन समाज सुधारकों में कबीर, गुरूनानक, चैतन्य महाप्रभु का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।[१०] जिन्होंने भक्ति आन्दोलन को गतिशीलता प्रदान की थी। भक्ति आन्दोलन ने जनसाधारण के जीवन की परिस्थितियो में परिवर्त्तन लाने एवं व्यक्तिगत मुक्ति तथा भगवान से रहस्यात्मक मिलन का रास्ता प्रदान किया था।[११] हिन्दू समाज के दयनीय दशा तत्कालीन हिन्दू समाज में प्रचलित कुरीतियों, हिन्दू असहिष्णुता को नष्ट करने का सफल प्रयास भक्ति आन्दोलन के संतो के द्वारा किया गया था।[१२] सामाजिक और सांस्कृतिक लोकाचार के रूप में समन्वय कई मायनों में हिन्दूओं और मुसलमानों के बीच जनवादी धार्मिक आन्दोलन के रूप में जाना जाता है।[१३] भक्ति आन्दोलन ने हिन्दू-मुस्लिम समन्वय स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

रामानंद एक महान् समाज सुधारक थे। नि:संदेह रामानंद की शिक्षाओं ने विचार के दो विद्यालयों को जन्म दिया-रूढ़िवादी और उदारवादी, रूढ़िवादी विद्यालयों का प्रतिनिधित्त्व भक्ति माला के लेखक नाभादास और तुलसीदास ने किया, जो प्रसिद्ध कविता रामचरितमानस के लेखक है।[१४] उदार स्कूल का प्रतिनिधि कबीर, नानक और अन्य लोगों के द्वारा किया गया था। रामानंद के शिष्य कबीर ने अपने शानदार शिक्षा के सामाजिक दर्शन को साकारात्मक रूप दिया।[१५] रामानंद के शिष्य में सबसे अधिक और विख्यात शिष्य कबीर थे जिनका समय १४४० ई. से १५१० ई. था। इस काल में कबीर ने भक्ति माला के उदार स्कूल का विकास किया था। उन्हें उत्तरी भारत के भक्ति आंदोलन में गौरवान्वित पद प्राप्त हैं। कबीर ने बाद में कहा जाता है कि वह एक हिंदू विधवा के पुत्र थे जो अपनी लाज बचाने हेतु उनके जन्म के पश्चात् उन्हें बनारस के एक तालाब के किनारे छोड़ दिया गया था। नवजात शिशु का लालन-पालन नीरू नामक एक मुस्लिम जुलाहा ने किया था। कबीर ने शादी के उपरांत अपने पिता के व्यवसाय को अपनाया था। कबीर उदार प्रवृत्ति के थे। यही कारण था कि उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश समय भक्ति और एकांतवास में बिताया।[१६] रामानंद ने उन्हें भक्ति संप्रदाय में शामिल किया था। रामानंद स्नान करने के लिए एक दिन गए और स्नान को जाते समय अंधेरे में रामानंद का पैर कबीर के ऊपर पड़ा रामानंद बोले राम-राम कहा। कबीर ने इसी को गुरु मंत्र माना और रामानंद उन्हें शिष्य मानने लगे। कबीर इसे स्वयं कहते हैं।

काशी में हम प्रकट भय है रामानंद चेतये।
सद्गुरु के प्रताप ते मिट गयो हो सब दुख दर्द।
कह कबीर दुविधा मिट गुरु मिलया रामानंद।[१७]

किंतु कुछ लोगों के अनुसार कबीर जन्मजात जुलाहे थे। कबीर एक स्थान पर अपने को जुलाहा कहते हैं तो ब्राह्मण में काशी का जुलाहा कहते है मुझे मोर। यह भी कहा जाता है कि कबीर ने मानिकपुर के प्रसिद्ध सूफी सेख तकी से दीक्षा ली थी। कबीर ने शेख तकी के नाम स्वयं उल्लेख किया है

मानिकपुर की कबीर बसेरी।
मदहति सुनि शेख तकि केरी।

कबीर पढ़े-लिखे नहीं थे जैसा कि वह एक स्थान पर वह स्वयं स्वीकार करते हैं "मासि कागज छुयो नहिं कलम मुझे नही हाथ" किंतु कबीर ने अशिक्षित होकर भी हिंदुओं तथा मुसलमानों को अमूल्य शिक्षा प्रदान की। उल्लेखनीय है कि कबीर को इस्लाम का एकेश्वरवाद बहुत पसंद था अत: वह निर्गुण की ओर विशेष रूप से झुकाव था। रामानंद से राम मंत्र लेकर भी कबीर वेदांत और इस्लाम से हार-जीत निरंकरवाद संस्कार ना छोड़ सके थे।[१८] कबीर को राम का एक अलग रूप में देखते थे उनका राम-रहीम सहित आदि है।

रामानंद ने जातियों के अवरोध के खिलाफ अपना तुच्छ रास्ता तैयार किया। कबीर ने बाद में परस्पर विरोधी पंथों से बाहर एक धार्मिक राष्ट्रीय संश्लेषण का ईमानदारी से प्रयास किया। कबीर न तो धर्म शास्त्री थे और न ही दार्शनिक थे। वह शिक्षक के रूप में हमारे सामने आते हैं। हिंदू और इस्लाम में जो उन्होंने गलत और नकली माना, उनकी निंदा करने का साहस कबीर के उपदेशों का केंद्रीय विषय है। कबीर ने जाति भेद को स्वीकार करने या हिंदू दार्शनिक के शत्रु विद्यालयों या ब्राह्मणों द्वारा निर्धारित जीवन के चार प्रभागों के अधिकारों को मान्यता देने

से इंकार कर दिया। कबीर ने कहा कि भक्ति के बिना धर्म बिल्कुल धर्म नहीं है। वह तपस्वी थे तथा उपवास और लक्ष्य देने का कोई मूल्य नहीं था। अपने साथियों के माध्यम से वे हिन्दुओं और मुसलमानों को समान रूप से धार्मिक उपदेश देते थे तथा उनके पास किसी भी धर्म के लिए कोई प्राथमिकता नहीं थी।[१९] कबीर ऐसे बिंदु पर खड़े थे जहाँ से एक और हिंदुत्त्व निकल जाता है और दूसरी ओर मुसलमान। जहाँ एक ओर योग मार्ग निकल जाता है वहीं दूसरी ओर भक्ति मार्ग। जहाँ से एक और निर्गुण भावना निकल जाती है वहीं दूसरी ओर सगुण भावना। कबीर की वाणी वह है जो योग के क्षेत्र में भक्ति का बीज पढ़ने से अंकुरित हुई थी।[२०] कबीर एक ऐसे धर्म प्रचारक मिशन को एकजुट करना चाहते थे तथा सभी जातियों के पंथो को एकजुट करना चाहते थे। हिंदू धर्म और इस्लाम के उन विशेषताओं को खारिज कर दिया जो इस भावना के खिलाफ थे। जो व्यक्ति के वास्तविक अध्यात्मिक कल्याण के लिए कोई महत्व नहीं रखते थे। उन्होंने दोनों धर्मों से अपनी सामान्य तत्त्व और उनके बीच समानताएँ बन चुकी थीं। कबीर के धार्मिक विचारधाराओं में समानताएँ, हठधर्मिता और कर्मकांड थे। उन्होंने संस्कृत और फारसी दोनों शब्दों का प्रयोग किया और दोनों रूपों के आलौकिक रेखा और हिंदी भाषा के साथ उन्होंने धर्म के सवाल पर सबसे बड़ा मूल्य रखा और दोनों के बाहरी ओर औपचारिकता की चिंता की। उन्होंने जानबूझकर दोनों धर्मों के बीच विभाजन का त्याग कर दिया और एक मध्यम मार्ग सिखाया। कबीर ने दोनों के रीति-रिवाजों को त्यागते हुए उच्च मार्ग अपनाया था। यदि आप कहते हैं कि मैं हिंदू हूं तो वह सच नहीं है और न ही मैं एक मुसलमान। मैं पांच तत्त्वों से बना एक शरीर हूँ जहाँ अज्ञान खेलता है। मक्का वास्तव में काशी बन गया और राम रहीम बन गए हैं। कबीर अपने धर्म त्याग मिशन के प्रति सचेत थे।[२१] उनके जीवन शिक्षा ने उसे उस रेखा का अनुसरण किया जो दोनों के अनुरूप हैं।

रामानंद और कबीर ने शिया और सून्नी संप्रदाय के इस्लाम और शेख से कहा कि मैं निर्पेक्ष भगवान का सेवक हूँ और मैं भक्तों को बचाने के लिए आया हूँ। मैंने दुनिया की मुँह की बात से ज्ञान का आदेश दिया है जिसमें सच्ची मोहर है। मुझे यहाँ भेजा गया था कि दुनिया को दु:ख में देखा गया था। सभी जन्म और मृत्यु के जंजीरों में बंधे थे और किसी को भी स्थाई घर नहीं मिला। सर्वशक्तिमान ने मुझे स्पष्ट रूप से शुरुआत और अंत दिखाने के लिए भेजा।[२२] सृष्टि से दुनिया के निर्माण को आगे बढ़ने के लिए यदि मेरा बात कोई नहीं सुनेगा वह अस्तित्व के सागर में डूब जाएगा। यह जागृत शिक्षाक कबीर थे। कबीर ने भक्ति सुधारों और सूफी संतों के साथ पूर्ण सहयोग किया था। यदा ही उनकी प्रवृत्ति धार्मिक होते हुए भी वह इस्लाम या हिंदू धर्म से स्वतंत्र थे। कबीर के शिष्य में हिंदू और मुसलमान दोनों धर्म के लोग थे।[२३] भक्ति आंदोलन में कबीर के प्रवेश का हिंदुओं और मुसलमानों के बीच सामंजस्य स्थापित करने का काफी फलदायक परिणाम निकला। हिंदू और मुसलमान दोनों समुदाय से स्थानीय हैं तथा संबंधों के कारण कबीर धार्मिक पक्षापात से बिल्कुल मुक्त थे।[२४] कबीर ने हिंदुओं और मुसलमानों के बीच समानता का प्रतिवाद किया एवं पारस्परिक विरोध को भी समाप्त करने का प्रयत्न कर एकता के सूत्र से बांधने का कार्य किया।[२५] कबीर के द्वारा मौजूदा सामाजिक व्यवस्था की सबसे ज्यादा कटु आलोचना की गई थी।[२६] मध्यकालीन इतिहासकार ने लिखा है कि *"हिंदू तथा मुसलमान में एकता स्थापित करना कबीर के जीवन का मुख्य उद्देश्य था।"*[२७] कबीर का सिद्धांत हिंदू तथा मुसलमान सबका ईश्वर एक है।[२८] एक साथ कबीर ने धर्म तथा संप्रदायों का संबंध संपूर्ण मानव समाज से बताया। मानव समाज का कल्याणकारी मार्ग प्रशस्त किया और मानव समाज के बीच शोषण-शोषित का भेद मिटाकर साम्य स्थापित किया। कबीर के द्वारा प्रकट की गई भक्ति की भावनाओं ने मानवता के प्रेम के साश्रृत गुणों को अग्रभूमि में ला दिया।[२९] कबीर के सामाजिक दर्शन का मुख्य विषय यह था कि मानवता बहुत मानवीय दृष्टिकोण का एक पवित्र विश्वास है। स्वाभाविक रूप से उनके शिष्यों की संख्या बढ़ गई। अनुयायियों ने जो पंजाब, गुजरात और बंगाल तक फैला हुआ है। मध्यकालीन उत्तर भारतीय संतो के साथ शुरु हुई कबीर शिक्षाण का मूर्त्त परिणाम यह था कि उसने लोगों के दृष्टिकोण को चौड़ा किया तथा हिंदुओं और मुसलमानों के बीच आपसी सामंजस्य के रास्ते खोले।[३०] कबीर एक जबरदस्त क्रांतिकारी पुरुष थे और उनके कथनों की ज्योति ने इतने क्षेत्रों को उजाला किया कि उन्हें किसी परिचय की जरूरत नहीं थी।[३१] कबीर के सिद्धांतों का जनसाधारण पर व्यापक प्रभाव पड़ा। उनके द्वारा प्रतिपादित पंथ उनकी मृत्यु के साथ समाप्त नहीं हुआ था अपितु बाद में भी चलता रहा था।[३२] कबीरपंथियो के नाम से विख्यात उनके शिष्यों ने एक पंथ की स्थापना की और इस पंथ ने अपने द्वारा स्थापित की परंपराओं को बराबर निभाया।[३३] कबीर ने समाज की बुराइयों को अच्छी तरह समझा देखा था तभी तो उन्होंने जो प्रहार किया उसका सामाजिक सुधार दृष्टिकोण से व्यापक प्रभाव पड़ा था। सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में नवीन चेतना को जागृत करने में कबीर का महत्वपूर्ण स्थान था।[३४] कबीर के उपदेश उस समय की धार्मिक और सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप पूर्णत: शांतिप्रिय थे। उन्होंने एक समेकित भारतीय समाज की कल्पना की और लाखों लोगों का विश्वास प्राप्त करने में सफल रहे। उनके क्रांतिकारी और सामाजिक महत्त्व के दोहे व कहावतें देश भर में विख्यात हुए जो मध्यकालीन भारतीय संस्कृति के विरासत का एक भाग बना। उनके मृत्यु के पश्चात उनके हिंदू और मुसलमान भाईयों को कबीरपंथियो के नाम से जाना

गया है। कबीर पंथ के श्रद्धालुओं और उपासकों ने उनकी छवि को आज भी बरकरार रखा है।[३७]

निष्कर्ष

इस प्रकार मध्यकालीन भारत में भक्ति आंदोलन के निर्गुण संत कबीर के योगदान को नकारा नहीं जा सकता है। समाज को नई दिशा प्रदान करने में इन योगदान सराहनीय रहा था। भक्ति आंदोलन ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया। समाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों पर इसका व्यापक प्रभाव था। यह आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक आंदोलन से निराश हिंदू समाज में आशा का संचार जागृत करता है। धर्म तथा आध्यात्मिकता के भावों में प्रकटीकरण हुआ था। भक्ति आंदोलन ने प्राचीन धर्म के पुनः स्थापना का सफल प्रयास किया था। भक्ति आंदोलन के प्रमुख संतों में कबीर, गुरुनानक, चैतन्य महाप्रभु, वल्लभाचार्य आदि के सिद्धांतों एवं योगदान से सामाजिक और धार्मिक अवधारणाओं में भी परिवर्त्तन हुआ था जिसके फलस्वरूप मध्यकालीन भारत में सामाजिक परिवर्त्तन की भूमिका निर्मित हो सकी थी। जनसाधारण के जीवन की परिस्थितियों में परिवर्त्तन लाने एवं व्यैक्तिक मुक्ति और भगवान से रहस्यात्मक मिलन का कार्य किया था। हिंदू समाज की दयनीय दशा, तत्कालीन हिंदू समाज में प्रचलित कुरीतियाँ, हिंदू और सहिष्णुता, अपरिवर्त्तनशील तथा अनुदत्ता को नष्ट करने का सफल प्रयास भक्ति आंदोलन के संतो के द्वारा किया गया था। भक्ति आंदोलन ने ना केवल कर्मकांड और जाति भेद का जमकर विरोध किया बल्कि हिंदू समाज में धर्म परिवर्त्तन पर भी रोक लगाया। सामाजिक और सांस्कृतिक लोकाचार के रूप में समन्वय कई मायनो में हिंदू और मुसलमानों के बीच जनवादी धार्मिक आंदोलन के रूप में जाना जाता है। आंदोलन में हिंदू और मुसलमानों में संबंध का कार्य किया अर्थात् दोनों धर्मों में समन्वय का कार्य ही नहीं बल्कि मनुष्य की समानता का भी प्रतिपादन किया था। इस प्रकार मध्यकालीन भारत में भक्ति आंदोलन कई दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण आंदोलन रहा था।

संदर्भ सूची

१ युसूफ हुसैन, गिल्बसेस ऑफ मिडिवल इंडियन कल्चर, एशियन पब्लिकेशन हाऊस, नई दिल्ली, पृ.-६

२. सतीश चंद्र मित्तल, मुस्लिम शासन तथा भारतीय जनसमाज, ७वीं शताब्दी से १८७७ ई. तक, सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, सितंबर २००७, पृ.-७२

३.हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर हिंदी ग्रंथ, रत्नाकार लिमिटेड, मुंबई, १९५५, पृ.-३९

४. मोहम्मद उमर, भारतीय संस्कृति का मुसलमानों पर प्रभाव,जानकी प्रसाद शर्मा (अनुवादक) सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, १९९६, पृ. -४; पुनः सतीश चंद्र मित्तल, पूर्वोद्धृत, पृ. ७२

५.आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, १९९८, पृ. -१, पुनः सतीश चंद्र मित्तल, पूर्वोद्धृत, पृ. सं.-६३

६.जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, भाग ३, ओरिजन रोड कोलकाता, १९२८, पृ.-१४९; पुनः सतीश चंद्र मित्तल, पूर्वोद्धृत, पृ.-६३, के. एल. खुराना, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, २०१३, पृ. १७

७. ईश्वरी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ मिडिवल इंडिया, प्रेस लिमिटेड इलाहाबाद,१९३३, पृ.-१७६; के. एल. खुराना, पूर्वोद्धृत, पृ.-१५; पुनः सतीश चंद्र मित्तल, पूर्वोद्धृत, पृ.-६३

८.सतीश चंद्र मित्तल, पूर्वोद्धृत, पृ.-६४; पुनः आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, पूर्वोद्धृत, पृ.-७

९. राधेशरण, मध्यकालीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकेडमी, भोपाल, २०००, पृ.-१६

१०.ए. रसीद, सोसायटी एंड कल्चर इन मेडिवल इंडिया, के. एल. मुखोपाध्याय, कोलकाता, १९६९, पृ. -२४३; पुनः मोहम्मद उमर, पूर्वोद्धृत, पृ.-६

११.सतीशचंद्र, मध्यकालीन भारत में इतिहास लेखन, धर्म और राज्य का स्वरूप, शाहिद खान (अनुवादक) ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली, १९९९, पृ. सं. ८३; पुनः ताराचंद, इनफ्लुएंस ऑफ इस्लाम ओपन इंडियन कल्चर,

इंडियन प्रेस लिमिटेड, इलाहाबाद, १९३६, पृ.-१४५

१२.लईक अहमद, मध्यकालीन समाज संस्कृति, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, २०११, पृ.-३२, पुनः राधेशरण, पूर्वोद्धृत, पृ. सं.-१५;

१३.हरबंस मुखिया, मध्यकालीन भारत नए आयाम, अनुवादक - नरेश नदीम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८५, पृ.-८०; मोहम्मद उमर, पूर्वोद्धृत, पृ.-७

१४. ए रसीद पूर्वोद्धृत, पृ.-२४४

१५.वही, पूर्वोद्धृत, पृ.-२४५

१६.हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य का इतिहास : उद्भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९५२, पृ.-७९, जे. एल. मेहता, मध्यकालीन भारत का वृहत् इतिहास, खंड ३, जवाहर पब्लिशर्स एंड डिसटीब्यूटर्स, नई दिल्ली, २०१६, पृ.-२४२; साथ ही, के. एल. खुराना, पूर्वोद्धृत, पृ.-९९

१७.लईक अहमद, पूर्वोद्धृत, पृ.-३७

१८.राधेशरण, मध्यकालीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, २००७, पृ.-३०३; के. एल. खुराना, पूर्वोद्धृत, पृ.-९८
१९.जी. एच. वेस्टकॉट, कबीर एण्ड कबीर पंथ, कुर्गी मिशन प्रेस, इलाहाबाद, १९०७, पृ.-४५-४६; ए. रसीद पूर्वोद्धृत, पृ.-२४३-२४४
२०.राधेशरण, मध्यकालीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, पूर्वोद्धृत, पृ. ३०५
२१.ताराचंद, पूर्वोद्धृत, पृ.-१५०
२२.वही, पृ.-१५१
२३.जे. एल. मेहता, पूर्वोद्धृत, पृ.-२४३
२४.ईश्वरी प्रसाद, भारतीय मध्ययुग का इतिहास, १२०० ई. से १५२६ ई., इंडियन प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, १९६८ पृ.-५४७
२५.अजीज अहमद, स्टडी इन इस्लामिक कल्चर इन इंडियन, इन्वारमेंट क्लैरेंड प्रेस ऑक्सफोर्ड, १९६४, पृ. -१४७
२६.सतीशचंद्र, मध्यकालीन भारतीय राजनीति, समाज और संस्कृति, ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली २०१६, पृ.-१८६
२७.आशीर्वादलाल श्रीवास्तव, दिल्ली सल्तनत, शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी प्राइवेट लिमिटेड, आगरा, १९६२, पृ.-४६
२८.ईश्वरी प्रसाद, पूर्वोद्धृत, पृ.-५४७, पुनः आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पूर्वोद्धृत, पृ.-४६
२९.सतीश चंद्र, मध्यकालीन भारत, सल्तनत से मुगल तक, जवाहर पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, २०१३. पृ.-२६३ पुनः जे. एल. मेहता, पूर्वोद्धृत, पृ.-४४३
३०.ए. रसीद, पूर्वोद्धृत, पृ.-२४९-२५०
३१.हजारी प्रसाद द्विवेदी, पूर्वोद्धृत, पृ.-१६४; हरफूल सिंह आर्य, समाज धर्म कला एवं वास्तुकला, रिसर्च पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पूर्वोद्धृत, पृ.-११९
३२.के. एल. खुराना, पूर्वोद्धृत, पृ.-१०१; पुनः हरफूल सिंह आर्य, वही पृं.-१११
३३.आशीर्वादलाल श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पूर्वोद्धृत, पृ.-४७
३४.हरफूल सिंह आर्य, पूर्वोद्धृत, पृ.-१११; जे. एल. मेहता पूर्वोद्धृत, पृ.-२४३
३५.आर. के. परुथी, सल्तनतकालीन भारत का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, अर्जुन पब्लिकेशन, दिल्ली, २००८, पृ.-२७२; जे. एल. मेहता, वही, पृ. २४३; देखें के. एल. खुराना, पूर्वोद्धृत, पृ. -१०२

संजय कुमार